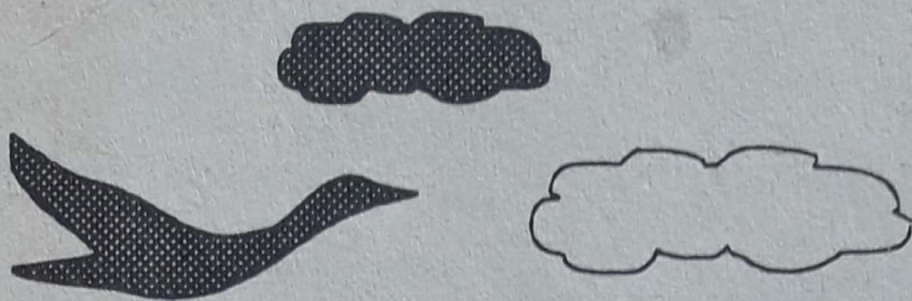
डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली

हंसा ! उड़हूं गगन की ओर



एस-सीरिज
अरविन्द प्रकाशन, जोधपुर



हंसा!
उड़हूं गगन की ओर

गुरुदेव

डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान

डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी

जोधपुर (राजस्थान) - ३४२००१

फोनः ०२९१-३२२०९

प्रकाशक : मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान
डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी
जोधपुर (राज.)-३४२००१
फोनः०२९१-३२२०९

संस्करण : १९९३

मूल्य : ५.०० (पांच रुपये)

मुद्रक : नव शक्ति इन्डस्ट्रीज,
C. १३, न्यू रोशनपुरा, नजफगढ़ दिल्ली

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान पत्रिका से साभार लेख

प्राक्कथन

आज जबकि निरंतर बढ़ती जा रही विषमताओं में, पुनः आध्यात्मिकता की छांव ढूँढी जा रही है, फिर से भारतीय परम्पराओं की बात कही-सुनी जाने लगी है, भारतीय विद्याओं की पुनर्व्याख्या और समीचीनता अनुभव की जा रही है, भौतिकता में छुपी रिक्तता अनुभव की जा रही है - व्यक्ति के समक्ष कोई स्पष्ट मार्ग नहीं है, जो उन्हें पूर्ण तृप्ति दे सके। कहने को तो बहुत से मत हैं, बहुत सी पद्धतियां हैं, लेकिन ऐसा कोई भी नहीं जो उसे अपनी सुगन्ध से आप्लावित कर दे . . . ऐसी घटाटोप स्थिति में एक नाम स्वतः ही उभर कर समक्ष आता है -- **"पूज्यपाद सद्गुरु गुरुदेव डा० नारायण दत्त श्रीमाली जी"** का - एक ऐसा दैवी व्यक्तित्व, जिनके पास जाते ही मन की सारी समस्यायें और मन का सारा तनाव, स्वतः समाप्त होने की क्रिया में आ जाता है, और इस तथ्य के साक्षीभूत हैं, उनके सैकड़ों-हजारों वे शिष्य, जो उनका घनिष्ठ साहचर्य प्राप्त कर चुके हैं।

एक श्रेष्ठ ज्योतिषी के रूप में, एक प्रख्यात ज्योतिर्विद् के रूप में वे सम्पूर्ण देश की सीमाओं से

बाहर भी विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में विख्यात रहे हैं, लेकिन उनके विराट व्यक्तित्व का तो यह केवल एक पहलू भर है। वास्तव में तो वे इस विसंगति से भरे नैराश्य और घुटन की पीड़ा के अन्धकार में, एक ज्योतिर्विद् से भी अधिक, एक ज्योतिपुंज के समान हैं, जिनके दैदीप्यमान मुख-मंडल पर सदैव ही आलोकित रहती है -- दैवी आभा। सचमुच उनके नेत्रों में जहां एक ओर उपस्थित है सूर्य जैसा तीव्र तपोबल का प्रभाव, वहीं उनके रोम-रोम से और मुख - मुद्रा से फूटती स्मित हास्य साक्षात पूर्णिमा के चन्द्र के समान ही सुधामय है, किंतु इस ज्योतिपुंज को स्पर्श करने के लिये व्यक्ति को थोड़ा तो प्रयास करना ही होगा, जिस प्रकार से बन्द पड़े कमरे में केवल एक खिड़की खोलना प्रर्याप्त होता है और एक ही क्षण में सूर्य अपनी तेजस्विता और चन्द्रमा अपनी पीयूष रश्मियों का प्रवेश बिना किसी हिचकिचाहट के औदार्य पूर्वक कर देता है, वही स्थिति होती है किसी भी तपः पूत एवं ऐसे ऋषि के समक्ष। सूर्य का प्रकाश या चन्द्रमा की किरणें धीरे-धीरे करके कमरे में प्रवेश नहीं करतीं, यह तो निर्भर करता है कि व्यक्ति ने उनके प्रवेश के लिये क्या स्थान बनाया है, ठीक यही स्थिति है 'पूज्यपाद गुरुदेव' के सन्दर्भ में। प्रारम्भिक प्रयास

करने की आवश्यकता है और आप्लावित कर लेना है अपने आप को उनकी दिव्यता से, केवल एक उपस्थिति के पश्चात्, फिर उनके व्यक्तित्व के बारे में अधिक कुछ कहने-सुनने की आवश्यकता शेष रह ही कहां जाती है!

यह जीवन का एक सत्य है कि ऐसे दिव्य व्यक्तित्व इस धरा पर अधिक समय के लिये अवतीर्ण नहीं होते। पूज्यपाद गुरुदेव भी यदि इस धरा पर उपस्थित हैं, तो केवल अपने गुरुदेव **'पूज्यपाद परमहंस स्वामी सच्चिदानन्द जी'** की आज्ञा को शिरोधार्य करने के कारण, जिससे कि छल, कपट, व्याभिचार और निरंतर यद्धों से बोझिल हो गई इस धरा पर पुनः शांति और सौजन्यता का वातावरण स्थापित किया जा सके। युद्ध और साम्प्रदायिक तनाव किसी एक स्थान पर ही केन्द्रित नहीं रहते, इनसे उत्पन्न होने वाली घृणा की लहरियां, भय का प्रकोप, धीरे-धीरे बढ़ता हुआ, पूरी मानवता को सहमा कर रख देता है, और यही तो देख रहे हैं हम -- आप जीवन में प्रतिदिन। जिस प्रकार जंगली घास धीरे- धीरे बढ़ती हुई, अपने मध्य में खिले हुए इक्का-दुक्का सुन्दर पुष्पों को भी दबोच कर रख देती है, उन्हें अपने तीक्ष्ण किनारों से विदीर्ण कर देती है, उसी प्रकार यदि कहीं कोई इक्का-दुक्का मानवीय गुणों से युक्त व्यक्ति है भी

तो वह सहम-सिमट जाता है ऐसी ही दूषित प्रवृतियों के बीच में, और इस जंगली घास को, घृणा-वैमनस्य की इन घास-पतवारों को समाप्त करने के लिए जो अस्त्र उठाना पड़ता है, वही साधना जगत में होता है -- दैवी कृपा का बल। आज पूज्यपाद गुरुदेव के वरदहस्त के नीचे **'सिद्धाश्रम साधक परिवार'** संस्था में ऐसे ही सैकड़ों साधक और सुयोग्य शिष्य आगे बढ़कर उन मूल्यों के प्रतिस्थापन के लिये सन्नद्ध हैं, जो कि अन्य लोगों द्वारा केवल की कहा - सुना जाने वाला विषय मात्र है।

आज जबकि विश्व में युद्ध की काली छाया दिन-प्रतिदिन गहरी होती जा रही है, सन्देह और उहापोह के वातावरण में जीवन निराश और हताश होता जा रहा है, तब पूज्यपाद गुरुदेव का इस प्रकार से सक्रिय होना सचमुच आश्चर्यजनक है। **प्रचार और प्रसार से सर्वथा दूर रहते हुए, आलोचनाओं और विरोधों में अपने को अडिग बनाये रखते हुए, उन्होंने मौन रहते हुए, साधनाओं की ऐसी गंगा प्रवहित की है, जो आज गंगासागर जैसी पूर्णता प्राप्त कर चुकी है।** क्योंकि यह नदी बीच में समाप्त होने वाली नदी नहीं है, यह प्रवाहित हुई है एक देवपुंज के द्वारा, और जाकर पूर्णता से मिलती है वहां-- जहां जीवन का महासमुद्र लहरा रहा है। अन्य मतों की भांति

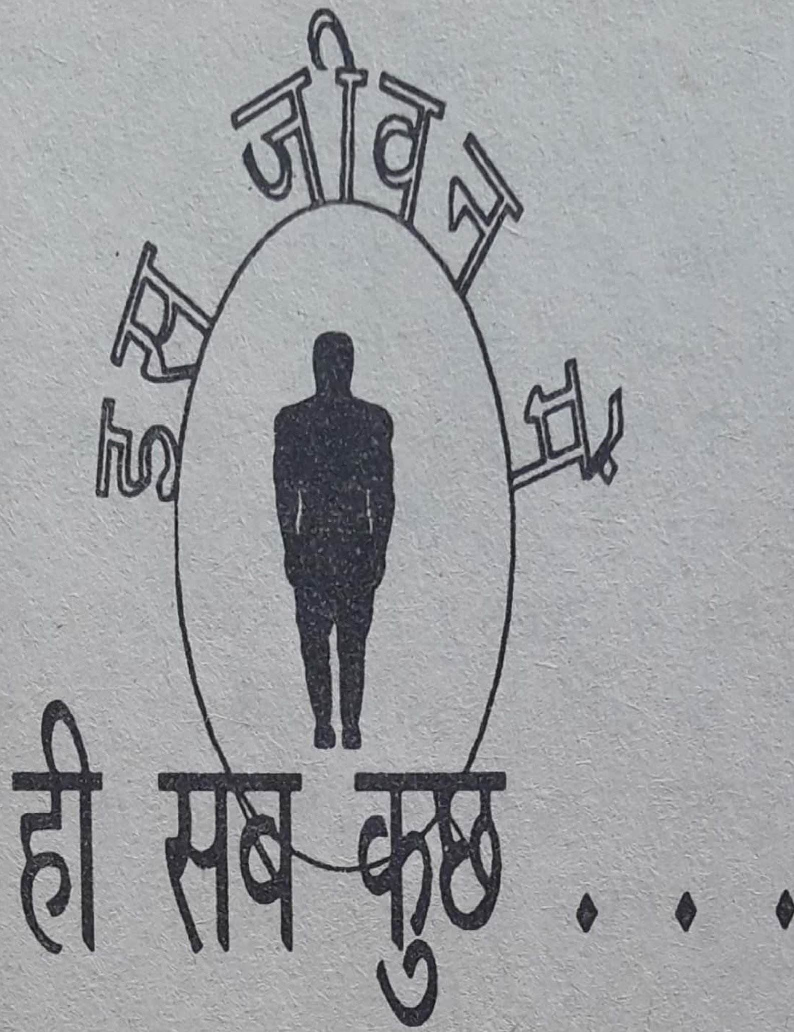
पूज्यपाद सद्‌गुरु गुरुदेव ने पोथी-पत्रों में बन्द होने वाला ज्ञान या अटपटा और रहस्यमय ज्ञान अपने पाठकों और शिष्यों को नहीं दिया। निरंतर कटु आलोचनाओं के बीच भी **उन्होंने "मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान" पत्रिका द्वारा समाज को ऐसा दुर्लभ ज्ञान और गोपनीय साधनाएं दी हैं, जिनकी उपादेयता का मूल्यांकन, शायद समाज आज नहीं कर पाएगा।**

केवल साधनाओं का ज्ञान ही नहीं, केवल उपदेश ही नहीं, उन्होंने अपने तपस्यात्मक अंश को जिस प्रकार से दीक्षाओं के माध्यम से निःसंकोच वितरित किया है, उसे देखकर तो **यही कहना पड़ता है कि वास्तव में भगवान शिव ही गुरु बनकर अवतरित हुए हैं,** क्योंकि अपना सर्वस्व लुटा देने की प्रवृत्ति भगवान शिव के अतिरिक्त किस अन्य देवी या देवता में नहीं रही है. . . धर्म- चक्र प्रवर्तन है यह! बुद्धत्व का पुनः आगमन है इस धरा पर, जिनत्व का पुनर्प्रकटीकरण है, राम की मर्यादा और कृष्ण का श्रृंगार भी तो! क्योंकि गुरुदेव ने पहली बार अपने व्यक्तित्व से शास्त्रों में निहित इस तथ्य को प्रकट किया है कि गुरु तो वास्तव में चौंसठ कलाओं से पूर्ण व्यक्तित्व होते हैं, जीवन के प्रत्येक रंग, प्रत्येक सुख-दुख और विसंगति का ज्ञान होता है उन्हें, और इसी की

पुष्टि होती है।

पूज्यपाद गुरु देव ने स्वयं गृहस्थ जीवन को "धारण" कर एक आम व्यक्ति की तरह ही नित्यप्रति की समस्याओं से जूझ कर, केवल एक परिवार का ही नहीं अपने सैकड़ों हजारों शिष्य रूपी पुत्रों का भी दायित्व अत्यन्त कुशलता पूर्वक वहन कर, जिस प्रकार प्राचीन गुरु - शिष्य परम्परा का एक ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत किया है, उसकी तो समता आने वाले समय में सम्भव ही नहीं हो सकेगी। ऐसे ही मानवीय गुणों से आपूरित तपः पुंज से विभूषित, ऋषियों और मुनियों के जीवन में चिन्तनीय, योगियों द्वारा वन्दनीय पूज्यपाद गुरुदेव को शत् शत् वन्दन।

-- प्रकाशक



तुम मेरे शिष्य हो या मेरे आत्मीय हो या मेरे से परिचित हो या पत्रिका के पाठक हो, किसी न किसी रूप में यदि तुम्हारा और मेरा संबंध बना हुआ है, तो इसकी जड़ें जरूर पिछले किसी जीवन से जुड़ी रही होंगी। यह संभव ही नहीं है कि तुम मुझसे इसी जीवन में जुड़े , कई - कई जन्मों से तुम मेरे साथ जुड़े हुए हो, हो सकता है कि तीन जन्म पहले, पांच जन्म पहले, आठ जन्म पहले या दस जन्म पहले। मैंने तुम्हारे साथ यह वायदा किया होगा कि **मैं तुम्हें इन भौतिक बाधाओं से**

परे हटाकर उस पूर्णता तक पहुंचा दूंगा जिसे 'ब्रह्म ' कहा गया है, जिसे पूर्णता कहा गया है, जिसे 'पूर्ण मदः पूर्ण मिदं' कहा गया है, और इसके बाद हर जीवन में तुम मुझसे कहीं न कहीं मिले -- शिष्य के रूप में, पाठक के रूप में, परिचित के रूप में और किसी भी अन्य रूप में। हर बार मैंने तुम्हें समझाया है, पूर्णता तक पहुंचाने का प्रयत्न किया है। हर बार तुम ने मेरा हाथ छोड़ दिया है, हर बार तुम भटक गये, हर बार भौतिकता के दल-दल में फंस गये। हर बार पत्नी, पुत्र और परिवार - जनों के वाक्- जाल में उलझ कर अपनी साधना को अधूरा छोड़ दिया और फिर तुम्हें जन्म लेना पड़ा, फिर तुम्हें मल - मूत्र में रहना पड़ा, फिर तुम उसमें से बाहर निकले, फिर तुम अपने जीवन को बड़ा करते हुए उन्हीं समस्याओं में घिर गये, और जो जीवन का सही आनन्द, जीवन का जो सही प्रेम, स्नेह, ऊंचाई है, प्राप्त नहीं कर पाये।

इसका कारण है हर बार तुम्हारा इस प्रकार की भौतिक समस्याओं से उलझा हुआ रहना , पर इससे तुम्हें मिला क्या ? इस जीवन में ही तुम देख लो कि तुम्हें क्या मिल गया है?

थोड़े से कागजी नोट, थोड़े से परिवार के बंधन और

इसके साथ ही साथ मिला तुम्हें तनाव, परेशानियां, बाधाएं, अड़चनें, कठिनाइयां, असंतोष , जीवन की अपूर्णता। क्या यह सब कुछ सही है? क्या जीवन इतना घटिया मामूली सा है, कि इन छोटी चीजों के बदले जीवन को बरबाद कर दिया जाए? तुम एक प्रकार से इन तुच्छ कागजी नोटों के बदले अपने जीवन को बरबाद ही कर रहे हो, **सही अर्थों में कहना चाहूं तो तुम्हारा जीवन खरे सोने के सिक्के की तरह है और तुम इसे रांगे के भाव, लोहे के भाव बेच रहे हो, बरबाद कर रहे हो।** ऐसा कब तक चलेगा? ऐसा तुम्हारे जीवन का अधूरापन कब तक समाप्त होगा? कब तक तुम मन में पीड़ा और दर्द लिए घूमते रहोगे? कब तक तुम्हारे मन में छटपटाहट बनी रहेगी, कब तक तुम्हारे जीवन में असंतोष उभर रहा होगा? कौन सा ऐसा क्षण आएगा जब तुम्हें समझ आएगी, कौन सा ऐसा क्षण आयेगा जब तुम अहसास कर सकोगे कि मुझे जीवन में पूर्णता प्राप्त कर लेनी है।

यह पूर्णता गुरु ही दे सकते हैं

तुम्हारा यह अधूरापन, तुम्हारी यह कमी, तुम्हारी यह न्यूनता संसार का कोई वैज्ञानिक, कोई साइंस, कोई टेक्नोलॉजी दूर नहीं कर सकती। तुम्हारे

मन का जो अंधियारा है वह बाहर से दूर हो ही नहीं सकता। कोई ऐसी मशीन बनी ही नहीं जो तुम्हारे असंतोष को दूर कर सके। **तुम जिस पैसे पर गर्व कर रहे हो वे तो चांदी के चंद ठीकरें हैं, टुकड़े हैं। उन चांदी के टुकड़ों से तुम मन का संतोष प्राप्त नहीं कर सकते।** उन कागजी नोटों से मन का आनन्द मोल नहीं ले सकते, प्रसन्नता नहीं प्राप्त कर सकते, जीवन की उमंग नहीं खरीद सकते, जीवन का वास्तविक सुख इन रुपयों के बदले नहीं प्राप्त हो सकता। जीवन की श्रेष्ठता केवल पैसों से प्राप्त नहीं हो सकती। यह तुम्हारे मन का आनन्द, यह तुम्हारे मन का संतोष, यह मन की पूर्णता, न तुम्हारे पैसे दे सकते हैं, न तुम्हारी पत्नी दे सकती है, न तुम्हारा पुत्र दे सकता है और न तुम्हारा समाज दे सकता है।

इस समाज में जिसको तुमने पत्नी कहा है, पति कहा है, चाचा, काका, ताऊ जो कुछ कहा है, उन्होंने तुम्हें केवल बंधन दिया है, बांध दिया है छोटे से कटघरे में, एक छोटे से मकान में, एक पत्नी के साथ, दो चार बच्चों के साथ, पांच हजार रुपयों के साथ *वे बंधन दे सकते हैं, मुक्ति नहीं दे सकते, वे तुम्हें परेशानियां दे सकते हैं उलझनें दे सकते हैं जीवन का*

आनन्द नहीं दे सकते हैं। वे तुम्हें गृहस्थ की कठिनाइयां दे सकते हैं, तुम्हें आकाश में उड़ने की क्षमता नहीं दे सकते। आकाश में उड़ने का आनन्द हंस ही प्राप्त कर सकता है। वह तो मानसरोवर का हंस ही अनुभव कर सकता है कि मानसरोवर झील में डुबकी लगाने का आनन्द क्या होता है, और **यह आनन्द गुरु के अलावा और कोई दे ही नहीं सकता, न देवता, न मनुष्य , न मित्र, न परिवार, न पत्नी , न पति , न पुत्र, न बन्धु , न बान्धव और जब तक ज्ञान प्राप्त नहीं होगा तब तक तुम्हारे जीवन में पूर्णता प्राप्त नहीं हो सकती** और जब तक पूर्णता प्राप्त नहीं होती तब तक तुम्हारा यह जीवन बार - बार घिसा-पिटा चलता रहेगा। एक ऐसा जीवन जो घिसे हुए रिकार्ड की तरह है, जो बार - बार एक ही बात पर घिसटती रहती है। आखिर तुम कब सावधान होगे? कब चैतन्य होगे? कब एहसास करोगे कि हमें यह सब बन्धन तोड़ कर जीवन का आनन्द प्राप्त करना है, जीवन की उमंग लेनी है, जीवन का ऐश्वर्य प्राप्त करना है। इन रुपयों-पैसों, घर - मकान और चांदी के चंद टुकड़ों के बदले उस खरे सोने को लेना है, उस हीरे को प्राप्त करना है जो जीवन में पूर्ण आनन्द दे सकता है, जीवन में पूर्ण चैतन्यता दे सकता है, जीवन की पूर्णता दे सकता है।

मैं तुम्हें चौरासी लाख योनियों से इस एक योनि में ही खड़ा कर सकता हूं

हमारे शास्त्रों में कहा है कि **चौरासी लाख योनियां** होती हैं। व्यक्ति हर एक योनि में भटकता हुआ इस मनुष्य जीवन को प्राप्त करता हैं। अब तुमने मनुष्य जीवन प्राप्त किया है, यह तुम्हारे साठ साल का, सत्तर साल का जीवन है। वैसे भी तुमने तीस - पैंतीस साल समाप्त कर दिए हैं, कुल बीस - पच्चीस साल बचे हैं इस मानव जीवन के, और यह जीवन भी समाप्त हो गया, तो पुनः चौरासी लाख योनियां भटकने के बाद ही यह मानव जीवन प्राप्त हो सकेगा, कब प्राप्त हो सकेगा कुछ कहा नहीं जा सकता। यदि ऐसा जीवन प्राप्त हो भी गया और सही सद्गुरु प्राप्त नहीं हुए तो भी वह जीवन व्यर्थ चला जायेगा, उस जीवन का कोई अर्थ, कोई मकसद नहीं रह पायेगा। अब जबकि तुम्हारे हाथ में यह जीवन है तो इस जीवन का मूल्यांकन करना तुम्हारा फर्ज है। *इस जीवन में तुम्हें सब कुछ कर देना है, इसी जीवन में पूर्णता प्राप्त कर लेनी है, जिससे कि भविष्य में बार - बार जन्म नहीं लेना पड़े बार - बार उस मल - मूत्र में नहीं रहना पड़े, बार - बार उस भौतिकता में बंधकर जीवन को एक*

कटघरे में कैदी की तरह व्यतीत नहीं करना पड़े। मैं तुम्हें इन चौरासी लाख योनियों के आवागमन से मुक्ति दिलाकर इसी जीवन में मुक्त कर देना चाहता हूं, इसीलिए तो मैं आया हूं।

बिना त्याग के जीवन में पूर्णता आ ही नहीं सकती

यह भी अच्छी तरह से समझ ले कि जब तक तुम किसी चीज को अपनी छाती से चिपकाए रखोगे, उससे आसक्ति रखोगे तब तक जीवन में पूर्णता आ ही नहीं सकती, पूर्णता तभी आ सकती है । जब आप विलुप्त हो जाएं, सबसे परे हट जाएं, किसी के प्रति तुम्हें आसक्ति नहीं रहे न पति के प्रति, न पत्नी के प्रति, न धन के प्रति, न ऐश्वर्य के प्रति, न समाज के प्रति *इन सबसे हट कर जब तुम खड़े हो सकोगे तब तुम सही अर्थों में शिष्य बन सकोगे, साधक बन सकोगे, पूर्णता तक पहुंचने का रास्ता प्राप्त कर सकोगे।* आकाश में उड़ने के लिए पंख फैलाने की क्षमता मिल सकेगी, मानसरोवर में डुबकी लगाने की क्रिया आ सकेगी। इसके लिए बहुत जरूरी है-- **'त्याग'** क्योंकि तुम्हें पूर्णता तक पहुंचाने वाला केवल एक ही व्यक्तित्व है जिसको हमने **'गुरु'**

कहा है, जिसको **'पूर्णमदः'** कहा है, जिसको ***'गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णु , गुरुर्देवो महेश्वरः'*** कहा गया है। उस तक पहुंचने की क्रिया ही तुम्हारी पूर्णता है। उन्हें प्राप्त करने की क्रिया ही तुम्हारी श्रेष्ठता है। उनके होंठों पर तुम्हारा नाम आ जाना ही अपने आप में महानता है क्योंकि उनके सामने तो सैकड़ों, हजारों, लाखों व्यक्ति हैं और शिष्य हैं, और सबके नाम याद रखना संभव नहीं है। जब तक उनके होंठों पर तुम्हारा नाम नहीं होगा, उनके हृदय में जब तक तुम बस नहीं जाओगे तब तक उनके और तुम्हारे बीच में संबंध कैसे बन पायेंगे? संबंध बनाने के लिए जरूरी है कि तुम बिल्कुल अपने गुरु के साथ एकाकार हो जाओ, मिल जाओ, एक हो जाओ, तुम्हारा और गुरु का अस्तित्व अलग रहे ही नहीं।

त्याग -- गुरु तक पहुंचने का पहला कदम

और यह तभी संभव है जब तुम त्याग कर सको 'बुद्ध' की तरह, जिसने अपने गुरु के सामने जाकर अपने गले का हार, अपने आभूषण , अपने राजसी वस्त्र चरणों में समर्पित कर दिये और कहा -- " अब मैं मुक्त हूं। कोई राजसी चीज मेरे पास नहीं है। मैं केवल आप

के दिए वस्त्र धारण करना चाहता हूं। मैं इसी जीवन में आपके चरणों में पूर्णता प्राप्त कर लेना चाहता हूं।''

तुम्हें मुक्त होना है **''बुद्ध''** की तरह, तो जो एक राजा का पुत्र होने के बाद भी अपने पूरे ऐश्वर्य के साथ गुरु - चरणों में समर्पित हो गया, सौंप दिया-- नहीं चाहिए ये चांदी के टुकड़े, नहीं चाहिए यह वैभव *नहीं चाहिए यह ऐश्वर्य, नहीं चाहिए यह सम्पन्नता। मुझे केवल आप की श्रेष्ठता और दिव्यता चाहिए। मुझे चाहिए कि मैं आप के हृदय में स्थान बना सकूं।* मैं आप के आंखों के रास्ते आप के हृदय में पहुंच सकूं। मैं आप के होठों पर अपना नाम अंकित कर सकूं और यह त्याग ही इस बात का अहसास होगा, इस त्याग से ही गुरु इस बात को अनुभव कर सकेंगे कि तुम में लगन है, चेतना है। गुरु को तुम्हारा धन, वैभव, ऐश्वर्य चाहिए नहीं, मगर वह तुम्हारा त्याग देखना चाहता है। देखना चाहता है कि तुम सिर्फ होंठों से ही 'गुरु' शब्द का उच्चारण कर रहे हो या तुम्हारे हृदय में भाव है, एक चिन्तन है, एक विचार है या अपने आप को पूर्णता के साथ समर्पित करने की क्षमता है। **यह क्षमता तुम्हारे त्याग से अनुभव हो सकेगी। यह तुम्हारे चिन्तन से स्पष्ट हो सकेगी। यह तुम्हें तब प्राप्त हो सकेगी, जब तुम अपना सब कुछ**

समर्पित कर दोगे, सब कुछ सौंप दोगे। जो कुछ रांगा है, लोहा है, तांबा है यह सब कुछ सौंप कर ही उस पूर्णता को प्राप्त कर सकोगे जिसे '**हीरा**' कहा गया है। जिसको अपने आप में '**बहुविभूषित**' कहा गया है, जिसको '**पूर्णमदः**' कहा गया है। इस प्रकार से ही जीवन में पूर्णता प्राप्त कर सकोगे और वह गुरु यह अहसास कर लेगा कि यह वास्तव में समर्पित है, वास्तव में ही इसमें त्याग -वृत्ति है। वास्तव में इसने त्याग को विसर्जित कर दिया है। न इसे पद का मोह है, न यह ऑफिसर है, न इस बात का गरूर है, न इसे धन का घमण्ड है, न व्यापार का और न परिवार का घमण्ड रहा है। सब कुछ गुरु- चरणों में सौंप दिया है, विमुक्त भाव से बिना लाग लपेट के। तब गुरु अपने हाथ को तुम्हारे सिर पर रख देगा। तब गुरु इस बात को अनुभव कर सकेगा कि अब तुम में एक पूर्ण त्याग की भावना है, और यह सब कुछ सौंप देना ही पूर्णता है, यह सब कुछ विसर्जित कर देना ही श्रेष्ठता है।

अपना जो कुछ है वह सब कुछ उनके चरणों में समर्पित कर देना पहला कदम है उस रास्ते पर जो पूर्णता की ओर जाता है, अमरत्व की ओर जाता है, जो रास्ता श्रेष्ठता की ओर जाता है, जो गुरु से एकाकार

होने का रास्ता है। आज तक जितने भी उच्च कोटि के योगी सन्यासी बने **चाहे वह शंकराचार्य हों, चाहे गोरखनाथ हों, चाहे सूर ,मीरा, तुलसी, कबीर हों, चाहे विश्वामित्र , वशिष्ठ, कणाद, अत्रि,पुलस्त्य हों, चाहे बुद्ध हों , चाहे महावीर हों** सभी अपने वैभव के साथ धन और ऐश्वर्य के साथ गुरु- चरणों में समर्पित हुए हैं, अहसास कराने के लिए कि मुझे अब त्याग ही करना है, अब मुझे अपने पास कुछ रखना ही नहीं है। ये चांदी के टुकड़े आप रखिये मुझे तो आप वह दीजिए जो वास्तव में हीरे हैं, जो बहुमूल्य जीवन है, जो अपने आपमें श्रेष्ठता है। यही स्थिति गुरु को अहसास दिला सकती है कि वास्तव में लगन है इसके मन में, धोखा नहीं है , धूर्तता नहीं है, चालाकी नहीं है, मक्कारी नहीं है सही अर्थों में समर्पण है, सही अर्थों में भव्यता के साथ अपने को समर्पित कर देने की क्रिया है और जब ऐसा होगा तब गुरु अपने सीने से लगा लेगा। अहसास कर लेगा कि यह व्यक्ति वास्तव में हीरक खंड है, इसके मन में कोई लाग -लपेट नहीं है, न पत्नी के प्रति , न पुत्रों के प्रति, न समाज के प्रति, न धन -सम्पत्ति के प्रति। ठोकर मार कर खड़ा हो गया है, उस जगह जाने के लिए जहां जाने के लिए योगी - यति भी तरसते हैं, उस

जगह जाने के लिए जहां अमृत का झरना निरंतर प्रवाहित रहता है, **उस जगह जाने के लिए जिसको सिद्धाश्रम कहा गया है, उस जगह जहां मृत्यु होती ही नहीं अमरत्व प्राप्त हो जाता है।**

यह अवसर कब आएगा

मैं पूछ रहा हूं कि निर्णय लेने के लिए कब तक सोचते रहोगे ? कब तक किनारे पर बैठे हुए कंकर,पत्थरों से अपनी झोलियां भरते रहोगे? कितना समय बिता दोगे? आठ - दस जन्म तो बिता चुके हो, दो - चार साल नहीं। **जानते हो आठ- दस जन्म किसे कहते हैं? पन्द्रह - बीस वर्ष जो तुमने बिता दिए किसे कहते हैं? ऐसे तो सोचते - सोचते तुम्हारा तो पूरा जीवन बीत जायेगा और गुरु तुम्हारे हाथ से छूट जायेगा।** तुम्हारे हाथ में रह जायेगा केवल समाज का जहर, समाज की पीड़ाएं, तनाव, दुख, चिन्ताएं, कष्ट और आत्म - ग्लानि। इनके अलावा तुम्हारे पास कुछ रहेगा ही नहीं। गुरु तुम्हारे पास नहीं रह पायेगा, गुरु तो आगे निकल गया होगा और हाथ मलने, पश्चाताप करने के अलावा तुम्हारे पास कुछ रहेगा ही नहीं। हो सकता है अगला जन्म लो और गुरु तुम्हें नहीं मिलें, इसीलिए जो

कुछ करना है इसी जीवन में करना है, जो कुछ निर्णय करना है अभी करना है और आज ही करना है। आज ही अपने आप को समर्पित कर देना है। इसी क्षण दोनों हाथ फैला कर कह देना है, मैं आपका हूं, आपके चरणों में विसर्जित हूं, आप मुझे उस स्थान का रास्ता बताइए जहां मैं पहुंचना चाहता हूं। जिसको अमरत्व कहा है, जिसको पूर्णता कहा गया है, जिसको सिद्धाश्रम कहा गया है और ऐसी स्थिति ही तुम्हें पूर्णता तक पहुंचाने का रास्ता दिखाएगी।

यह दीक्षा के माध्यम से ही संभव है

इसके लिए साधना करने की आवश्यकता नहीं है, महाविद्याएं सिद्ध करने की भी जरूरत नहीं है, माला जपने की भी जरूरत नहीं है, दीपक जलाने, अगरबत्ती लगाने की भी जरूरत नहीं है इसके लिए तो एक ही जरूरत है 'समर्पण'। इसके लिए जरूरी है पूर्णता की दीक्षा प्राप्त करना, **पूर्णत्व दीक्षा** प्राप्त करना और गुरुदेव तुम्हें इसके लिए तैयार करेंगे।

दीक्षा का तात्पर्य है जो तुम नहीं प्राप्त कर सको गुरु तुम्हें दे, तुम साधनाओं के माध्यम से पूर्णता नहीं प्राप्त कर सकोगे, **कितने साल तक मंत्र जप करते**

रहोगे। मैंने देख लिया है कि इस जन्म में दस- पांच साल हो गये और तुम कुछ कर नहीं पा रहे हो, तब मुझे यह बात लिखनी पड़ रही है, तब मुझे तुमसे यह बात कहनी पड़ रही है, तब चैलेंज के साथ यह बात तुम्हें समझानी पड़ रही है कि तुम्हारा यह जीवन कहीं बरबाद न हो जाए, **तुम कुछ कर नहीं सकते तो मैं करूंगा।** कई बार तो तुम हाथ छुड़ाकर भाग गए पिछले जीवन में, उससे पिछले जीवन में, इस बार मैं तुम्हारा हाथ पकड़ रहा हूं, जिससे तुम भाग नहीं सको। इस बार मैं तुम्हें सीने से लगा लूंगा कि तुम अलग नहीं हो सको, इस बार मैं तुम्हें वह सब कुछ दे देना चाहता हूं जिसके लिए आया हूं। अभी तक मैं तुम्हारा रखवाला रहा हूं -- तुम्हारे जीवन का भी, तुम्हारी साधनाओं का भी। मैं रखवाला कब तक रहूंगा? जब तक मैं तुम्हें खुद उस लायक बना नहीं दूंगा कि तुम दूसरों के रखवाले बन सकोगे, दूसरों का मार्गदर्शन कर सकोगे, दूसरों को अमरत्व दे सकोगे, दूसरों को पूर्णता दे सकोगे और यह सब **पूर्णत्त्व दीक्षा** के माध्यम से संभव है। मैं तुम्हें यह पूर्णत्व दीक्षा देने के लिए तैयार हूं। यह तभी संभव होगा जब तुम मुक्त होकर आ सको, जब तुम्हारे मन में छल - कपट, असत्य विचार नहीं होगा। जब तुम्हारे

मन में शंका नहीं होगा, जब तुम्हारे मन में न्यूनता नहीं होगी, सब कुछ छोड़कर आना ही पूर्णता और पूर्णत्व दीक्षा का भाग है।

पूर्णत्व दीक्षा : गुरु चरणों में विसर्जन ही पूर्णता

मैं तुम्हें इस जीवन में ही उस जगह पहुंचा देना चाहता हूं जहां वापस जन्म नहीं होता, जहां तनाव नहीं होता, जहां किसी प्रकार की परेशानियां नहीं आतीं, जहां किसी प्रकार का कष्ट - अभाव नहीं होता, जहां एक आनन्द है, एक उमंग है, एक पूर्णता है, एक मस्ती है, एक चैतन्यता है, एक सम्पूर्णता है, ऐसा आनन्द है, जिसको **अखण्ड आनन्द** कहा गया है। अपनी मस्ती में झूमते हुए उस ईश्वर की, उस ईश्वरत्व के दर्शन करना है, जो अपने - आप में अद्‌भुत है, अनिवर्चनीय है, अद्वितीयता है जिसे करोड़ों में कोई एक बिरला ही प्राप्त कर सकता है। तुम वहां खड़े होकर देख सकोगे कि तुम्हारे परिवार वाले, तुम्हारे परिचित कितना खोखला और घटिया जीवन व्यतीत कर रहे हैं, तुम्हारे परिचित किस प्रकार से दुखी, परेशान और व्यथित हैं। तब तुम अहसास कर सकोगे कि तुम कितनी ऊंचाई पर

पहुंचे हुए हो, और जब वे आंख उठाकर तुम्हें देखेंगे तो उनके मन में ग्लानि और पछतावे के अलावा कुछ होगा भी नहीं। **वे सोचेंगे कि काश! वहां तक हम पहुंच पाते,** मगर वहां पहुंचने के लिए आवश्यक है पूर्ण रूप से गुरु चरणों में विसर्जन। उस जगह पहुंचने के लिए जरूरी है **पूर्णत्व दीक्षा** और उस जगह पहुंचने के लिए जरूरी है गुरु की सेवा। *सेवा के माध्यम से ही, गुरु के कार्यों को निरंतर करते हुए, ही गुरु के चरणों में समर्पित होते हुए भी वह सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है जो ऋषि - मुनियों का लक्ष्य रहा है,* जो देवताओं का लक्ष्य रहा है, जो समाज का लक्ष्य रहा है। यही तुम्हारा लक्ष्य है। मैं तुम्हें इन शब्दों के साथ आवाज दे रहा हूं, अपने सीने से लगाने के लिए, आवाज दे रहा हूं इस जीवन से छुटकारा दिलाने के लिए, आवाज दे रहा हूं इन सारे बंधनों से मुक्त होने के लिए, आवाज दे रहा हूं जीवन की पूर्णता देने के लिए, अगर तुम्हारे पांव ठिठक गए अगर तुम रुक गये तो तुम्हारा जीवन बर्बाद हो जाएगा, गुरु तुम्हें नहीं प्राप्त हो सकेंगे। फिर तुम्हारा यह जीवन बर्बाद हो जाएगा, मैं नहीं कह सकता कि अगली योनि तुम्हें कैसी मिले, मैं तो इस बार सब कुछ सौंप देना चाहता हूं, सब कुछ सौंप देना चाहता हूं अपने

पूर्णगुरुत्व के साथ।

मैं एक बार फिर तुम्हें आवाज देता हुआ चेतावनी देता हुआ, प्रेम से, स्नेह से, भाव - विह्वलता से, अपने सीने से लगाने के लिए, दोनों हाथ फैलाए आतुर खड़ा हूं। तुम्हें अपनी भुजाओं में भरने के लिए, अपने - आप में समाने के लिए, अपने - आप में समर्पित करने के लिए, अपने- आप में विसर्जित करने के लिए अपने- आप में समायोजित करने के लिए, पूर्णता देने के लिए। **मैं तुम्हें हृदय से आशीर्वाद दे रहा हूं।**

ooooo

तुम्हारे लिए. . .

मैं

हर क्षण उपस्थित

हूँ. . .

मेरे जीवन का सृजन एक विशेष उद्देश्य, एक विशेष लक्ष्य, एक विशेष चिन्तन के लिए हुआ है, और मेरा जन्म कोई आकस्मिक घटना नहीं है, उसकी एक सार्थक उपस्थिति है, काल खण्ड की विशेष और विशिष्ट उपलब्धि है, जिसके सामने है -- एक महत्वपूर्ण लक्ष्य. एक महत्वपूर्ण चिन्तन और एक महत्वपूर्ण धारणा।

इसी से जब तुम मुझसे मिलते हो, तो अपने आप को भुला बैठते हो, एक अजीब से क्षणों में खो जाते हो, तुम्हें अपना स्वयं का भी भान नहीं रहता, अपनी सारी चिन्ताएं, अपना सारा विषाद, अपना सारा दुख और दैन्य उस समय तुम पूर्ण रूप से भुला बैठते हो, जब मैं तुम्हारे सामने होता हूं, और इसका कारण, तुम्हारे और मेरे कालखण्ड का कुछ क्षणों का

परस्पर आदान -प्रदान है, एक दूसरे को लेने और देने की क्रिया है।

तुम मुझे मिलते हो, उन विशेष क्षणों में अपना सारा दुख, अपना सारा दैन्य और अपनी सारी परेशानियां, और अपनी चिन्ताएं मुझे दे डालते हो, और मैं बदले में तुम्हें लौटा देता हूं आनन्द के क्षण, मस्ती के क्षण, नृत्य करने के क्षण।

और मैं जब तुम्हारे बीच में से प्रवचन करके लौट जाता हूं, तब भी तुम एक अजीब सी मस्ती में डूबे रहते हो, भले मेरा शरीर तुम्हारे बीच नहीं होता, परन्तु मेरी शरीर की सुगन्ध, मेरी हृदय की श्वांस, तुम्हारे बीच उपस्थित रहती है और वह सुगन्ध, वह सुवास तुम्हारे नथुनों से होकर प्राणों तक पहुंचती रहती है , और तुम्हें बराबर ऐसा अहसास होता रहता है कि जैसे मैं तुम्हारे बीच में ही बैठा हूं, जैसे कि मैं तुम्हारे सामने साकार उपस्थित हूं, जैसे कि मैं मुस्कुरा रहा हूं और तुम मेरी मुस्कुराहट को अपने दिल में आंखों से अन्दर ही अन्दर उतार रहे हो।

इसीलिए तो मैं कहता हूं कि मैं हर क्षण तुम्हारे बीच उपस्थित हूं, चाहे आप कहीं पर भी हों। अगर तुम अपने घर पर भी हो और आंखें बंद करके मुझे अपने अन्दर उतारने का प्रयास करो, तो मैं तुम्हारे सामने जीवन्त व्यक्तित्व बनकर उभर आता हूं, बैठ जाता हूं तुम्हारे पास, **मुस्कुराहट भर देता हूं तुम्हारे**

जीवन में, और रोम - रोम पुलकित हो उठता है तुम्हारा, सारा शरीर स्वतः ही थिरकने लग जाता है, मन आनन्द के झूले पर झूलने लग जाता है, और तुम अजीब सी खुमारी में भर जाते हो।

पर ज्यों ही तुम्हारी आंख खुलती है, ज्यों ही तुम इस कठोर संसार के धरातल पर अपने- आप को उपस्थित पाते हो, त्यों ही मुझे अपने सामने न पाकर एक अजीब सी बैचेनी, एक अजीब सी कसमसाहट अनुभव करने लग जाते हो, ऐसा लगता है कि जैसे अभी - अभी कोई सुगन्ध का झोंका आया था और पास में होकर निकल गया, अभी - अभी कोई आनन्द के क्षण आंखों के सामने उपस्थित हुए थे और लुप्त हो गए, अभी - अभी सारे शरीर पर आनन्द की भीनी - भीनी फुहार होने लगी थी और रुक गयी।

इसका कारण मेरी जुदाई है, इसका कारण दुनिया की क्रूर कठोरता है। इसीलिए मुझे अपने सामने न पाकर तुम बैचेन हो उठते हो, भाव-विह्वल हो जाते हो, गला रुंध जाता है, आंखों से आंसू छल-छलाने लगते हैं और उस क्षण ऐसा लगता है जैसा तुम्हारा सब कुछ लुट गया हो, सब कुछ समाप्त हो गया हो, **एक झटके में ही वह आनन्द, वह मस्ती, वह प्यार की भीगी - भीगी फुहार लुप्त हो जाती है।**

इसीलिए तो मैं कहता हूं कि तुम्हारे मेरे शारीरिक

संबंध भले ही न हो, पर तुम्हारे और मेरे प्राणों के संबंध अवश्य हैं, और उन संबंधों को यह क्रूर दुनियां काट नहीं सकती, तुम्हारे मेरे आत्मा के संबंधों के बीच में तुम्हारे मां - बाप, भाई - बहन, पति - पत्नी और समाज बाधक बन कर खड़ा रह नहीं सकता, क्योंकि तुम्हारे हृदय के तार मेरे हृदय के तारों से जुड़े हुए हैं, तुम्हारे प्राणों की झंकार मेरे हृदय से तरंगित होती है, तुम्हारे हृदय का कमल मेरे सुवास से महकता है, इसलिए कि **तुम मेरे हो और केवल मेरे हो।**

प्रेम की कोई परिभाषा नहीं होती, प्रेम को शब्दों के माध्यम से बांधा भी नहीं जा सकता, प्रेम होठों से कहने की बात ही नहीं, यह तो एक थिरकन है, आनन्द की अनुभूति है, जीवन की सितार के स्वर हैं, उसकी अपनी एक मिठास है, उसका अपना एक आनन्द है और ये आनन्द तुम्हारे और मेरे बीच प्रगाढ़ता के साथ विद्यमान है, यह प्रेम की डोर तुम्हारे और मेरे बीच कई - कई जन्मों से बंधी हुई है, जिसे तुम चाह कर भी तोड़ नहीं सकते, जिसकी वजह से तुम चाह करके भी मुझसे अलग नहीं हो सकते, जिसकी वजह से तुम हर क्षण, हर पल मुझ में खोए रहते हो, जब तुम कोई पुस्तक पढ़ रहे होते हो तो मैं उस पुस्तक की पंक्तियों और अक्षरों के आगे आकर खड़ा हो जाता हूं, जब तुम अकेले होते हो तो मैं मुस्कुराता हुआ तुम्हारे सामने बैठा हुआ मिलता हूं, जब तुम एकान्त में होते

हो तो मैं साकार सशरीर तुम्हारे सामने विद्यमान हो जाता हूं और तुम **अजीब सी मादक गुनगुनाहट से, थिरकन से, मस्ती से भर उठते हो** और तुम्हारी आंखों से प्रेम के आंसू छलछला उठते हैं, मन तरंगित हो उठता है, और दूसरे ही क्षण जब आंखें खोलते हो, और मुझे अपने सामने नहीं पाते, तो उन्हीं आंखों में तड़फ, कशिश और विरह के आंसू बहने लग जाते हैं, ऐसा लगता है कि अन्दर का सारा विषाद, सारा दुख, सारा दैन्य पिघल कर आंखों के द्वारा बह गया हो, इस मिलन और जुदाई के बीच तुम्हारा जीवन व्यतीत होता रहता है।

मैंने अभी - अभी बताया, कि मेरा जन्म मात्र घटना ही नहीं है, एक जीवन्त सजग उपस्थिति है, मेरा शरीर शिष्यों के संदेश का माध्यम है, मेरा जीवन शिष्यों को पूर्णता की ओर पहुंचाने की पगडण्डी है, आवश्यकता इस बात की है कि तुम अपने - आप में चैतन्य हो सको, तुम अपने आप में प्राणश्चेतना युक्त हो सको, तुम सही अर्थों में जाग सको, और कस कर मेरा हाथ पकड़ सको, मेरे साथ - साथ इस पगडण्डी पर चल सको, तो निश्चय ही मैं तुमसे वायदा करता हूं कि तुम उस पूर्णता तक पहुंच सकोगे, जो तुम्हारे जीवन का लक्ष्य है, तुम उस ब्रह्मानन्द में पूर्णता के साथ मगन हो सकोगे, जो मानव जीवन की उपलब्धि है, तुम उस ब्रह्म से साक्षात्कार कर सकोगे जो हमारे उपनिषदों का सार है।

इसीलिए तो मैं कहता हूं कि तुम चल तो रहे हो मगर तुममें प्राण नहीं है, तुम गतिशील तो हो मगर तुम जीवन्तता नहीं है, तुम सब कुछ कर रहे हो मगर उसमें सप्राणता नहीं है, और मेरा जन्म यही संदेश देने के लिए हुआ है, और मेरे जीवन का उद्देश्य इसी प्रेम की गागर को तुम्हारे गले में उड़ेलने के लिए हुआ है, मेरे जीवन की सार्थकता यही है कि मैं तुम्हें वापिस जीवन्त कर सकूं, वापिस चैतन्य कर सकूं, तुम अपने कन्धों पर अपनी शरीर की जिस लाश को ढोकर चले जा रहे हो, उसमें प्राण फूंक सकूं, उसमें चैतन्यता ला सकूं, उसमें हलचल मचा सकूं, और आनन्द के, मस्ती के, प्यार के, उन क्षणों में तुम्हें डूबो सकूं, जो जीवन का सार है, जो जीवन का आनन्द है, जो जीवन की तृप्ति है।

बहुत छोटा सा संदेश लेकर उपस्थित हुआ हूं, तुम सब लोगों के सामने, और वह संदेश है प्रेम का, मस्ती भरा जाम पीने का, जीवन को सही ढंग से जीने की कला सीखने का, बस आवश्यकता इस बात की है कि तुम एक बार इस मुर्दा शरीर में हलचल ला सको, बस जरूरत इतनी है कि तुम उस विरह की तड़फन अनुभव कर सको, तुम उन आंसूओं की भाषा पढ़ सको जो तुम्हारी आंखों से मेरे बिछुड़ने पर निकलते हैं, तुम उस आनन्द की फुहार में पूरी तरह से भीग सको जो मेरे मिलने पर चारों तरफ बरसती है, और यह फुहार तुम्हारे जीवन

में स्थाई बन सके, यह तुम्हारे जीवन की एक घटना बन सके, यह तुम्हारे जीवन का छलकता हुआ जाम हो सके।

तुम्हारे और मेरे जीवन का यह पहला ही परिचय नहीं है, मैंने तुम्हे पहली बार ही नहीं पहचाना है, तुम्हारे पिछले पच्चीस जन्मों का लेखा - जोखा मेरे पास है, तुम्हारे पिछले पच्चीस जीवन का हिसाब - किताब मेरे खाते में लिखा हुआ है। इसीलिए मैं तुमसे बहुत अच्छी तरह से परिचित हूं, और हर बार मैं तुम्हें आवाज देता हूं, हर बार तुम्हारे मुर्दा शरीर में प्राण फूंकता हूं, हर बार तुम्हारे बेजान पैरों में गतिशीलता भरता हूं और हर बार तुम्हें प्रेम के घूंट पिलाकर उन्मत्त करने का प्रयास करता हूं, पर हर बार समाज की रपटीली धरती पर तुम्हारे पांव रपट जाते हैं, हर बार तुम्हारा दामन पति, पत्नी, मां - बाप समाज के कांटों में उलझ कर रह जाता है और तुम ठिठक कर उन कांटों में अटके रह जाते हो, उस बीहड़ जंगल में ही भटक जाते हो, तुम्हारे गले से चीख निलकने का प्रयास तो करती है, परन्तु मजबूरियां गले को कस कर दबोच लेती है, मेरी तड़फ में **तुम्हारी आंखों से आंसू तो छलछलाने के लिए तैयार होते हैं, पर समाज की मुसीबतें, घर- गृहस्थी की परेशानियां उन आंसुओं को सही ढंग से बहने भी तो नहीं देतीं,** तुम्हारे जी को हल्का भी तो नहीं करने देतीं, तुम्हारे जीवन को तनाव रहित भी तो नहीं होने देतीं, और मैं उसी पगडण्डी पर तुम्हारे पास

में से होकर गुजर जाता हूं। और फिर वापस तुम्हारा जन्म होता है, और फिर तुम बड़े होते हो, **और फिर तुम अपने मन में कोई अभाव, कोई कसक, कोई तड़फ अनुभव करते हो,** कुछ ऐसा अहसास होता है कि जैसे तुम खाली - खाली हो, सब कुछ होते हुए भी कुछ ऐसा है जो तुम्हारे पास नहीं है, और तुम उसी खोज में इधर - उधर भटकते रहते हो, और जब तुम वापिस मुझसे आकर मिलते हो, तो सब कुछ याद आ जाता है, तुरन्त मेरे प्राणों से तुम्हारे प्राण मिल जाते हैं, एकदम से तुम्हारे दिल की धड़कनें, मेरी दिल की धड़कनों से जुड़ जाती हैं, और तुम्हारे होठों पर एक मिठास, एक गुनगुनाहट और एक झरने का संगीत थिरकने लग जाता है **और तुम्हारा जीवन, तुम्हारा बंधा हुआ जीवन, वापिस बहने लग जाता है,** एक बार वापिस मुझसे मिलकर तुम्हारे पैरों में चंचलता आ जाती है, मेरे प्राणों से प्राण जोड़ने के लिए तुम आतुर हो उठते हो और ऐसा लगता है कि जैसे सब कुछ समाप्त हो गया, सारा दुख और संताप, विरह और वेदना, अभाव और कष्ट दूर हो गए हैं, और मेरी उपस्थिति में तुम नाचने लग जाते हो, थिरकने लग जाते हो, मस्ती में झूम उठते हो और आनन्द की वर्षा में भीग कर उन्मत्त हो उठते हो।

इसीलिए तो मैं कहता हूं कि मैं तुमसे अलग नहीं हूं, इसीलिए तो मैं कहता हूं कि तुम अपनी सारी चिंताएं मुझ

पर छोड़ दो तुम तो केवल नाचो, गाओ और मस्ती में झूमते रहो, जब भी जो कुछ हो रहा है, उसे होने दो, मैं अपने आप ठीक समय पर तुम्हारा हाथ थाम लूंगा, मैं सही क्षण पर तुम्हारी अंगुली पकड़ कर पगडण्डी पर आगे बढ़ जाऊंगा, आवश्यकता इस बात की है कि तुम समाज से बगावत कर सको, जरूरत इस बात की है, कि तुम अपनी जिन्दगी के गन्दगी भरे क्षणों के विरुद्ध विद्रोह कर सको, जरूरत इस बात की है कि तुम मेरे शरीर की भाषा पढ़ सको, मेरी आंखों के संगीत को सुन सको, मेरे हृदय के चैतन्यता में उत्सवमय हो सको, रसमय हो सको, प्रीतिमय हो सको और छोड़ सको अपने जीवन के दुख, विषाद, कष्ट, अभाव और पीड़ाओं को।

और तुम देखोगे कि ऐसे क्षणों में केवल तुम ही नहीं नाच रहो हो, तुम्हारे साथ - साथ पूरा विश्व नृत्यमय है, सारा ब्रह्माण्ड थिरकन के साथ गतिशील है, तुम्हारी गुनगुनाहट से इस ब्रह्माण्ड की भी गुनगुनाहट साकार है, पर इसके लिए आवश्यक है, तुम अपने अहंकार को गला सको, अपनी अकड़ को समाप्त कर सको, तुम पूरी तरह से झुक सको, समर्पण के साथ मुझमें अर्पित हो सको और अपने सम्पूर्ण अस्तित्व के साथ मेरे प्राणों से आलिंगन कर सको।

और जब ऐसा हो सकेगा तब तुम्हारे जीवन में कोई कमी नहीं रहेगी, तब तुम्हें ज्ञान हो सकेगा कि मेरा जन्म क्यों

हुआ है? जिस प्रकार से समुद्र सरिता को आवाज देता है, जिस प्रकार संगीत गुनगुनाहट को स्वर देता है, उसी प्रकार से मेरे प्राण तुम्हें आवाज दे रहे हैं, अपनी बांहों में समेटने के लिए . . .

अब और देर करने की जरूरत नहीं है, क्योंकि पहले से ही बहुत देर हो चुकी है, पहले से ही काफी विलम्ब हो चुका है।

और मुझे विश्वास है कि जिस प्रकार से सुगन्ध हवा में लीन हो जाती है, और जिस प्रकार संगीत हवा मे रसमय हो जाता है, उसी प्रकार से तुम मेरे प्राणों में, मेरी जिन्दगी की धड़कनों में समा सकोगे, क्योंकि मैं जीवन्त गुरु हूं, एक सप्राण व्यक्तित्व हूं, मैं तुम्हारा हूं, और तुम्हें अपने आप में आत्मसात करने के लिए आतुर हूं, मैं हर क्षण, हर पल तुम्हारे साथ हूं, तुम्हारे सामने उपस्थित हूं।

०००००

हंसा! उड़हुं गगन की ओर. . .

तुम सभी शिष्य मेरे **"मानस के राजहंस"** हो और जितना ही मेरा शरीर कई - कई वर्षों को अपने आप में मेरे 'स्व' को संजोए हुए है, उसी प्रकार मेरा मन भी कई - कई जन्मों का साक्षी है, कि तुम मेरे मानस के राजहंस हो, और मैं तुम सबसे बहुत अच्छी तरह से परिचित हूं।

पर तुम्हारे सामने अथाह मानसरोवर झील फैली हुई है, ज्ञान का जल उसमें अगाध रूप से भरा हुआ है, जो कि स्वच्छ है, और निर्मल है , पवित्र है, और जिसमें डुबकी लगाना ही तुम्हारे जीवन का अहोभाग्य है, पर मुझे आश्चर्य तो इस बात से होता है कि मैं तुम्हें झील के मध्य में खड़ा हुआ आवाज दे रहा हूं और तुम झील के किनारे खड़े - खड़े कंकर पत्थरों में मुंह मार रहे हो।

यह तो तुम्हारी नियति नहीं है, यह लक्ष्य नहीं है और यह तुम्हारे कुल की परम्परा भी नहीं है, तुम्हारे पूर्वजों की परम्परा तो यह रही है कि तुम मानसरोवर झील में उतरो, डुबकियां लगाओ और अपने पंखों को अधिक स्वच्छ और अधिक बलशाली बनाकर मुक्त आकाश में विचरण करो।

तुम कई वर्षों से इस मानसरोवर में उतरने से घबराते रहे हो, तुम्हारे मन का भय हिम्मत नहीं जुटा पा रहा है और पिछले कई वर्षों से तुमने आनन्द के मुक्त आकाश में विचरण करना भी छोड़ दिया है, इसीलिए तुम्हारे पंखों में उड़ने की ताकत नहीं रही, उस आनन्द के आकाश में विचरण करने की क्षमता नहीं रही, **तुम्हारे पास शुभ्र श्वेत क्षमतावान पंख होते हुए भी तुम जमीन पर चलने को बाध्य हो,** जबकि तुम्हारी नियति, तुम्हारा लक्ष्य, और तम्हारा कुल - धर्म, मुक्त आकाश में विचरण करना है, पर पिछले कई वर्षों से तुमने उड़ना ही छोड़ दिया है, और इसीलिए तुम उड़ने से घबरा रहे हो, मन में एक अजीब सा भय समा गया है, कि कहीं उड़ने की कोशिश करुं और लड़खड़ा कर गिर न जाऊं, कहीं आकाश में विचरण करने की कोशिश करूं और धड़ाम से जमीन पर गिर कर अपने - आपको, अपने शरीर को चकनाचूर न कर दूं।

पर यह तुम्हारा भय है, ये तुम्हारे मन की शंकाएं हैं, ये तुम्हारे आस-पास कायर और बुजदिल परिवार वालों की

सलाह है, और उसी वजह से तुम मन में उड़ने की इच्छा रखते हुए भी चुपचाप बैठे हुए हो, मुक्त आकाश में विचरण करने के आनन्द की भावना मन में रखते हुए भी मन मार का बैठे हुए हो, मान सरोवर में डुबकियां लगाने की इच्छा रखते हुए भी, अपने बच्चों, अपनी हंसनी के साथ किनारे पर कंकर - पत्थरों में चोंच मार रहे हो, **यह सब तुम्हारा दोष नहीं है, तुम्हारे आस-पास के वातावरण का दोष है,** तुम्हारे आस -पास की पीढ़ी की बुजदिली है, तुम्हारी पिछली दो - तीन पीढ़ियों की कमजोरी है, क्योंकि उन्होंने तो मानसरोवर के अगाध जल में डुबकी लगाई, और न मुक्त आकाश में विचरण किया, और इसलिए जो वे नहीं कर सके, वही भय तुम्हारे मन में भरकर तुम्हें बुजदिल और कायर बना दिया।

पर उनमें और तुममें अन्तर है, उनके पास कोई गुरु नहीं था जो उनको स्मरण दिलाता, कि तुम राजहंस हो, उनके पास कोई पथ - प्रदर्शक नहीं था जो उन्हें उड़ने की कला सिखाता, उनके पास कोई **चेतना पुरुष** नहीं था जो अपने साथ ले जाकर मानसरोवर में डुबकी लगवाता, और पंखों में ताकत भरता, और इसीलिए वे चुप रहे, इसीलिए वे अकर्मण्य रहे, इसीलिए वे राजहंस होते हुए भी, कौए की जिन्दगी व्यतीत करते रहे।

पर तुम्हारा तो सौभाग्य है कि मैं तुम्हारे साथ हूं, तुम्हारा तो अहोभाग्य है कि मैं तुम्हारे साथ इस अगाध निर्मल जल में डुबकी लगाने के लिए और तुम्हें सुरक्षित रूप से डुबकी लगवाने के लिए तैयार हूं। तुम्हारा तो यह स्वर्णिम भाग्य है, कि मैं हर क्षण तुम्हें अपने साथ मुक्त आकाश में उड़ने के लिए सन्नद्ध कर रहा हूं, और यह विश्वास रखो कि आकाश में विचरण करते समय, मैं प्रतिक्षण, प्रतिपल तुम्हारे साथ हूं, किसी भी हालत में तुम्हें नीचे गिरने नहीं दूंगा, किसी भी स्थिति में तुम्हारे शरीर को लहूलुहान नहीं होने दूंगा, किसी भी स्थिति में तुम्हारा साथ नहीं छोड़ूंगा।

पर इसके लिए तुम्हें यह एहसास तो होना चाहिए कि मैं तुम्हारे साथ हूं, तुम्हें यह विश्वास तो होना चाहिए कि मैं कई - कई जन्मों से तुम्हारे जीवन का साक्षी - भूत रहा हूं, **तुम्हें यह एहसास तो होना चाहिए कि तुम मेरे ही मानस के राजहंस हो, मेरी ही जिन्दगी का एक हिस्सा हो, मेरे ही मन का एक भाग हो।**

इसीलिए मैं हर बार तुम्हें सावधान करता हूं, कि **तुम भेड़ों के बीच में चलते हुए सिंह हो।** तुमने अपना धर्म भुला दिया है, तुम कौओं के बीच गर्व से सीना फुलाकर बैठे हुए हो, और तुम अपना स्वरूप भुला बैठे हो, तुममें आकाश में उड़ने की, अबाध गति से विचरण करने की क्षमता है और

तुम जमीन पर ही कंकर - पत्थरों में , रेत के ढीहों में मुंह छिपाए हुए प्रसन्न हो, किंतु यह तो कायरों का स्थान है, ये बुजदिलों की स्थिति है, इसीलिए मैं तुम्हें, तुम्हारे स्वरूप से परिचित करा रहा हूं, **इसीलिए मैं तुम्हें आवाज दे रहा हूं, और इसीलिए मैं तुम्हें अपने पास बुलाने का निमंत्रण दे रहा हूं, और इसीलिए मेरे मन में, मेरे मन के मानसरोवर में, डुबकियां लगाने के लिए आमंत्रण दे रहा हूं।**

पर इसके लिए तुम्हें अपने मन के अंधकार को दूर करना होगा, क्योंकि यह तर्क का, बुद्धि का, अहंकार का अंधकार है जो तुम्हारे मन पर घनीभूत हो गया है और तुम्हारे मन को कई - कई परतों से ढक दिया है, तुम्हारे परिवार वालों ने इस मन पर सुनहरी चादर डाल दी है, तुम्हारे बेटों ने और स्वजनों नें चारों तरफ दीवारें खड़ी करके और अंधकार घना कर दिया है, और ऐसे अंधकार में जब मेरी आवाज, तुम्हारे मन से टकराती भी है, तो वह कुछ क्षण के लिए टकराकर लौट आती है, तुम उस अंधकार में कुछ कदम चलते भी हो पर दरवाजे का रास्ता उस अंधकार में दिखाई नहीं देता, और दीवारों से सिर टकराकर तुम लहुलुहान होते जा रहे हो।

परन्तु इतना निश्चित है, कि तुम इतना अंधकार होते हुए भी चुपचाप बैठे हुए नहीं हो, प्रकाश के दरवाजे का रास्ता ढूंढने की कोशिश कर रहे हो, यह बात जरूर है, कि जितनी

ही कोशिश तुम करते हो, तुम्हारी पत्नी, तुम्हारे पुत्र और तुम्हारे स्वजन अपने मरने की धमकी देकर तुम्हारे पैरों में बेड़ियां डाल देते हैं, जितना ही तुम द्वार को - प्रकाश के द्वार को - खोजने का प्रयत्न करते हो, तुम्हारे परिवार वाले, तुम्हारी बुद्धि और तुम्हारी तर्क और ऊंची दीवारें खड़ी कर देते हैं और मेरी आवाज उन दीवारों से टकराकर लौट आती है।

पर क्या इस अंधकार में भटकना ही तुम्हारी नियति है? क्या इन चारों तरफ की दीवारों से टकरा - टकरा कर लहुलुहान हो जाने की नियति तुम्हारे पास है? क्या इन कौओं के बीच जीवन बिताना ही तुम्हारा भाग्य है? क्या स्वच्छ पंख होते हुए भी जमीन पर पड़े रहना ही तुम्हारा चिन्तन है, क्या ऐसा कोई क्षण नहीं आ सकता कि मेरी आवाज तुम्हारे कानों तक पहुंच सके या कोई ऐसी स्थिति नहीं है कि तुम्हें अपने स्वरूप का बोध हो सके, क्या ऐसी कोई नियति नहीं है कि तुम अपने स्वयं के स्वरूप को पहचान सको।

पर मुझे तो हर बार तुम्हें आवाज देनी ही है, हर क्षण तुम्हें पुकारते ही रहना है, प्रत्येक जन्म में तुम्हें अपने पास बुलाते रहने का निमंत्रण देते ही रहना है, क्योंकि तुम्हारा मेरा संबन्ध इस जन्म का ही नहीं, पिछले पच्चीस जन्मों का है, **तुम्हारा मेरा सम्बन्ध केवल गुरु और शिष्य का ही नहीं, प्राण और आत्मा का है, तुम्हारा मेरा सम्बन्ध साधक और शिष्य का ही नहीं,**

जीवन की प्रेरणा और चेतना का है, और इसीलिए यह आवाज देना, यह पुकारना, मेरा कर्त्तव्य है, मेरा धर्म है, मेरा चिन्तन है, और मैं प्रतिक्षण अपने मानस के राजहंसों को आवाज देता ही रहूंगा।

यह बात भी सत्य है कि तुम मेरी बात सुन रहे हो, यह बात भी सत्य है कि मेरी आवाज तुम्हारे कानों से टकराती है, यह भी सत्य है कि मैं जो आवाज देता हूं , उसकी झंकार तुम्हारे चित्त पर पड़ती है, परन्तु उसका प्रभाव, उसका असर थोड़ी देर के लिए ही होता है, **और मैं चाहता हूं, कि यह अमिट हो जाए, मैं चाहता हूं, कि यह पूर्ण हो जाए,** मैं चाहता हूं, कि यह बार - बार आवाज देने का क्रम रुक जाए, एक बार ही तुम पूरी तरह से मेरी आवाज को, मेरे निमन्त्रण को आत्मसात कर सको, अपने हृदय में उतार सको, अपने हृदय के तारों को झंकृत कर सको, *तुममें थोड़ी सी और तीव्रता आ जाए, तुम्हारे प्रयासों में और सघनता आ जाए, तुम्हारी संकल्प शक्ति में और वृद्धि हो जाए, तुम्हारे समर्पण में और पूर्णता आ जाए, और तुम पूरी तरह से मेरे मानस में एकाकार हो सको।*

इसके लिए थोड़ा सा . . . बहुत थोड़ा सा प्रयत्न और करना है, तुम अपने पंख तो फड़फड़ा रहे हो, पर थोड़ा सा आकाश में ऊपर उठने की हिम्मत और दिखानी है, तुमने मानसरोवर की स्वच्छ झील में अपना चेहरा तो देखा है, और

तुम्हें विश्वास भी होने लगा है, कि तुम्हारे चेहरे और तुम्हारे आस - पास के चेहरों में बहुत बड़ा अन्तर है, परन्तु तुम में अभी डुबकी लगाने की हिम्मत नहीं आ पाई है, अभी पंख खोल कर आकाश में ऊपर उठने की हिम्मत नहीं जुट पायी है, और इसके लिए इस जन्म में ही प्रयत्न कर लेना है, इस समय ही अपने पंख फैला देने हैं। इसी क्षण अपनी संकल्प शक्ति को मजबूत कर देना है, इसी क्षण यह निश्चय कर लेना है, कि तुम्हें कौओं के बीच जिन्दगी नहीं बितानी है, इसी क्षण यह निश्चय कर लेना है कि तुम्हें कंकर - पत्थरों को नहीं चुनना है, क्योंकि तुम्हारी नियति मोती चुनने की है, क्योंकि तुम्हारी नियति पूरे पंख फैलाकर आकाश में उड़ने की है, क्योंकि तुम्हारी नियति इस परिवार वाले घेरे को साहस के साथ तोड़ कर आनन्द के झील में पूरी तरह से डुबकी लगा लेने की है।

और अब इसमें विलम्ब करना ठीक नहीं, क्योंकि तुमने मेरे साथ कई वर्ष बिता दिए हैं, क्योंकि इस परिवार वाले बंधन की वजह से तुमने कई जन्म बरबाद कर दिए हैं, क्योंकि इस अंधकारे के घेरे में सिमट कर तुमने जीवन का बहुत बड़ा हिस्सा समाप्त कर दिया है, और इस वजह से तुम्हें कंकर - पत्थर तथा मोतियों में अन्तर करने की क्षमता नहीं रही, जमीन पर चलने और आकाश में उड़ने के आनन्द के बीच अन्तर करने का चिन्तन नहीं रहा, और इसीलिए अपने मन का

अन्धकार दूर करने में तुम समर्थ नहीं हो सके हो।

पर इसका तात्पर्य यह नहीं है, कि तुम राजहंस नहीं हो, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि तुम इस मानसरोवर झील में डुबकी लगाने के योग्य नहीं हो, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि तुम मेरे साथ मुक्त आकाश में विचरण करने के योग्य नहीं रहे। इसका कारण मात्र तुम्हारी कमजोरी है, तुम्हारी बुजदिली है, तुम्हारी अकर्मण्यता है, तुम्हारी संकल्प शक्ति की न्यूनता है।

पर मैं तुम्हें भली - भांति पहचानता हूं, क्योंकि अभी तक तुम मेरे हाथ से छूटे नहीं हो, अभी तक तुम्हारे और मेरे बीच बहुत अधिक फासला नहीं हुआ है, अभी तक तुम्हारे और मेरे मन के बीच कोई और पर्दा नहीं डाल सका है, इसीलिए मुझे तुम पर पूरा - पूरा भरोसा है, इसीलिए मैं तुम्हें पहचानने की क्षमता रखता हूं। इसीलिए मेरी ज्ञान - दृष्टि तुम्हारे अन्तर को भेद कर, अन्दर के सारे स्वरूप को देख सकी है, और इसीलिए मुझे विश्वास है कि **तुम वही हो जो मेरे प्राणों के अंश हो, मेरी आत्मा की धड़कन हो, मेरे मानस के राजहंस हो।**

पर अब और जन्म लेना ठीक नहीं है, अब यह बार - बार जन्म मरण के झूले में झूलना ठीक नहीं है, अब बार - बार मल - मूत्र भरी जिन्दगी में जीने के लिए विवश होना ठीक नहीं है, अब यह कौओं के बीच अपने- आप को मन

मार कर बिठाए रखना ठीक नहीं है, अब और विलम्ब सह्य नहीं है, **अब और समय नहीं है,** बहुत थोड़ा सा समय बाकी बचा है, बहुत थोड़ी सी अवधि मेरी, तुम्हारे बीच बाकी रह गयी है, अब तुम्हें पहल करनी है, अब तुम्हें आगे बढ़ना है, अब तुम्हें मेरी आवाज को पहचानना है, अब तुम्हें मेरे शरीर को नहीं, मेरे अन्दर के स्वरूप को जानना है, अब मेरे प्रवचन नहीं, मेरे मौन की भाषा को समझना है।

और अब तुम्हें अपने पंख पूरी तरह से फड़फड़ाने हैं, अब तुम्हें अपने मन मे साहस का संचार करना है, मेरे साथ उड़ने की क्षमता मन में संजोनी है, सारे बंधनों को तोड़कर मुक्त आकाश में मेरे साथ विचरण करने की पात्रता सिद्ध करनी है, और **उस साधना के आकाश में, ज्ञान के आकाश में, आनन्द के आकाश में, पूर्णता के आकाश में मेरे साथ उड़ते हुए जीवन का रस, जीवन का आनन्द और जीवन की पूर्णता प्राप्त कर लेनी है।**

और इसीलिए मैं आवाज दे रहा हूं कि तुम मेरे मानस के राजहंस हो, और बिना विलम्ब किए मेरे साथ आनन्द में भागीदार हो जाना है, इसीलिए तो मैं आवाज दे रहा हूं, इसीलिए तो निमन्त्रण दे रहा हूं, **इसीलिए तो तुम्हारे साथ उड़ने को उद्यत हूं, प्रस्तुत हूं, तैयार हूं।**

०००००

सिद्धाश्रम साधक परिवार

सम्बन्ध प्राणों का

जब पहली पहली बार मानव सभ्यता ने अपनी आंखें खोली, सिन्धु नदी के किनारे जब पहली पहली बार ऋषि के मुंह से उद्घोष निकला तो उनका पहला संदेश था कि घोर भौतिकता, स्वार्थ, छल और कपट के वातावरण में दिव्य चेतना, एक ऐसी आध्यात्मिक तरंग, एक ऐसी ज्योति बराबर जलाये रखनी है, जिससे कि उन भौतिकता में फंसे हुए जीवों का कल्याण किया जा सके, उनको सही मार्ग दिखाया जा सके, उनके हृदय में पाप और अज्ञान की जमी हुई कालिमा को दूर कर दिव्य प्रकाश और आनन्द से पूरे हृदय को प्रफुल्लित किया जा सके।

और ऐसे ही दिव्य आश्रम की स्थापना हुई, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में एक मात्र **"सिद्धाश्रम"** एक ऐसा स्थान है जहां से पूरे संसार को आध्यात्मिक चेतना दी जा सके, एक ऐसा पवित्र

स्थान, जो देवकानन से भी उच्च और दिव्य हो, उच्चकोटि के देवता, योगी, ऋषि, मुनी, साधु, संन्यासी और महापुरुष आज भी हजारों वर्ष बीतने के बावजूद भी सशरीर **सिद्धाश्रम** में देखे जा सकते हैं, **वशिष्ठ** ने अपनी संहिता में कहा है कि **"सिद्धाश्रम जीवन की पूर्णता का पड़ाव है।"** मार्कण्डेय ने भगवती देवी की स्तुति और आराधना करने के बाद कहा कि "पूर्ण आत्मीय शक्ति सिद्धाश्रम से ही प्राप्त की जा सकती है ।" यहां तक कि **भगवत पाद् शंकराचार्य** ने अत्यन्त भाव विह्वल शब्दों में कहा कि वे व्यक्ति वास्तव में ही पुण्यशाली हैं जो सिद्धाश्रम के लिए कार्य करते हुए और वे व्यक्ति वास्तव में ही पूर्वजों का मुंह उज्जवल करने के योग्य है, जो इसकी उन्नति, इसके लिए चिन्तन और इस में प्रवेश करने के लिए प्रयत्न करते हैं।"

और हम ऐसी ही दिव्य संस्था के सहयोगी हैं, इसके माध्यम से हम अपने पूर्वजों से जुड़े हुए हैं, सही अर्थों में कहा जाए तो इसके द्वारा **इसके लिए कार्य करके हम वास्तविक रूप में पितृ ऋण उतारने में सक्षम हो रहे हैं,** अन्य सभी संस्थाएं अन्य सभी केन्द्र कुछ ही वर्ष पहले के हैं, जिनका उद्देश्य केवल अपने - आपको पुजवाना और स्वार्थ साधन करना है। यहां तक कि **हिन्दु** शब्द भी कुछ सौ वर्ष पहले का ही है, हम मूलतः आर्य हैं, आर्यावर्त हमारा प्रदेश रहा है, और आगे चल कर सिन्धु नदी के किनारे बसे होने के कारण सिन्धु के ही

समकक्ष "हिन्दु" शब्द की उत्पत्ति हुई और हम **हिन्दु** कहलाए, इस बात का हमें गर्व है और रहेगा। परन्तु **सिद्धाश्रम** शब्द तो इस शब्दों से भी बहुत पहले का है, यह शब्द और यह संस्था उस समय की है, जिसे आर्यावर्त काल या वैदिक काल कहा जाता है।

इसीलिए तो मैं कह रहा हूं कि हमारा गौरव है, यह हमारा सौभाग्य है कि हम इस मानव शरीर में आकर उस दिव्य संस्था के लिए कार्य कर रहे हैं, जो हमारे पुरखों की है, **मानव जीवन में आ कर के भी यदि हम अपने पूर्वजों से जुड़ नहीं सके, तो फिर हमारा जीवन लेना ही व्यर्थ है,** छोटी - मोटी संस्थाओं में जाकर फूलों के हार पहन लेने से उच्चता प्राप्त नहीं हो सकती, थोड़े बहुत स्वार्थ साधना से मन में सन्तोष, आनन्द और दिव्यता प्राप्त नहीं हो सकती, हम गौरव के साथ सीने पर हाथ रख कर कह सकते हैं कि हम अपने पूर्वजों के इस आश्रम से जुड़ कर उस महत उद्देश्य के लिए प्रत्यनशील है, जिसके द्वारा समस्त संसार को आध्यात्मिक चेतना मिलती है, जिनके प्रयत्नों से आज भी मानव में धर्म , दर्शन, पूजा - पाठ, हिन्दुत्व की भावना जीवित है, जाग्रत है और स्पंदित है।



जीवन को निष्कंटक बनाने का रहस्य

ये छह मांत्रोक्त दीक्षाएं

पूज्यपाद गुरुदेव के वरद हस्त तले

१. गुरु दीक्षा : प्रारम्भिक एवं आवश्यक दीक्षा, प्रत्येक साधना की नींव।

२. ज्ञान दीक्षा : जन्म-जन्मांतरों के कर्मों को काटने की दीक्षा। उच्च कोटि की दीक्षाओं के लिए प्रथम चरण।

३. धन्वन्तरी दीक्षा : जिससे शरीर रोग रहित और बलवान बन सके। जीवन व साधनाओं में सफलता के लिए आवश्यक।

४. महालक्ष्मी दीक्षा : जीवन में आध्यात्मिक उन्नति के साथ ही साथ आवश्यक है भौतिक समृद्धता, इसी का उपाय है यह दीक्षा

५. शक्तिपात द्वारा कुण्डलिनी जागरण : लम्बी साधनाओं की अपेक्षा कुण्डलिनी जागरण की सहज पद्धति। समर्थ व सक्षम पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा।

६. भुवनेश्वरी दीक्षा : केवल मात्र एक साधना, एक दीक्षा से भोग व मोक्ष दोनों ही प्राप्त कर लेने का अवसर।

सम्पर्क

गुरुधाम,
३०६- कोहाट एन्क्लेव,
पीतमपुरा, नई दिल्ली-३४,
फोन:०११-७१८२२४८,

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान,
हाईकोर्ट कॉलोनी,
जोधपुर(राज.) ३४२००१,
फोन: ०२९१-३२२०६

आध्यात्मिकता के पथ पर बढ़ते चरण

गौरवशाली हिन्दी मासिक पत्रिका

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान

प्रति माह पढ़िए



: साधना ज्ञान में रोचकता की त्रिवेणी . अनूठी साधनाएं
. आकस्मिक धन प्राप्ति
. सम्मोहन . रोग निवारण
. ऋण मुक्ति . पौरुष प्राप्ति
. आयुर्वेद . ज्योतिष द्वारा समस्या निवारण

साथ ही प्रत्येक वार्षिक सदस्य को उपहार में देते हैं कोई एक दुर्लभ यंत्र . . . सर्वथा निःशुल्क उसके घर में या व्यापार स्थल में स्थापित होने योग्य

नोट - पत्रिका का वार्षिक सदस्यता शुल्क १५०/- डाक व्यय १८/- अतिरिक्त, चेक स्वीकार्य नहीं।

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान

हाई कोर्ट कालोनी, जोधपुर (राज.), फोन- ०२९१ ३२२०९

संरक्षक :- डॉ नारायण दत्त श्रीमाली